Quest Journals
Journal of Research in Humanities and Social Science
Volume 13 ~ Issue 2 (February 2025) pp: 145-160
ISSN(Online):2321-9467
www.questjournals.org

Research Paper

भारतीय ज्ञान-विज्ञान का सर्वस्व – महाभारत

डॉ. पुष्पेन्द्र कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर, राजकीय महाविद्यालय सलारपुर गढ़मुक्तेश्वर हापुड़ उ०प्र०

सारांश

भारतीय ज्ञान-परंपरा में महाभारत एक ऐसा अद्वितीय ग्रंथ है, जो मानव जीवन के समस्त आयामों—धर्म, नैतिकता, राजनीति, समाज, मनोविज्ञान, शिक्षा, विज्ञान और दर्शन—का समन्वित एवं गहन विवेचन प्रस्तुत करता है। यह केवल एक ऐतिहासिक आख्यान नहीं, बल्कि एक समग्र ज्ञानकोश है, जिसमें मानव अस्तित्व से जुड़े प्रत्येक प्रश्न का समाधान निहित है। प्रस्तुत अध्ययन में महाभारत को भारतीय ज्ञान-विज्ञान के सर्वस्व के रूप में विश्लेषित किया गया है, जिसमें इसके स्वरूप, संरचना, नैतिकता, शासन व्यवस्था, मनोविज्ञान, युद्धनीति, सामाजिक व्यवस्था, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, शिक्षा प्रणाली, दर्शन तथा समकालीन प्रासंगिकता का विस्तार से अध्ययन किया गया है। महाभारत के विभिन्न प्रसंगों और श्लोकों के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि यह ग्रंथ केवल प्राचीन काल तक सीमित नहीं है, बल्कि आज के जटिल और परिवर्तनशील युग में भी अत्यंत प्रासंगिक है। इसमें वर्णित कर्म सिद्धांत, आत्मा की अमरता, धर्म का सूक्ष्म स्वरूप, सामाजिक न्याय, नेतृत्व के आदर्श, तथा समरसता के सिद्धांत आधुनिक जीवन की चुनौतियों का समाधान प्रस्तुत करते हैं। विशेषतः भगवद्गीता के माध्यम से कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्ति के समन्वय का अद्भुत दर्शन प्राप्त होता है, जो मानव को संतुलित और सार्थक जीवन की दिशा प्रदान करता है। अध्ययन में यह भी स्पष्ट किया गया है कि महाभारत में निहित वैज्ञानिक दृष्टिकोण—खगोल, चिकित्सा और अस्त्र-शस्त्र संबंधी अवधारणाएँ—प्राचीन भारतीय ज्ञान की उन्नत अवस्था को दर्शाती हैं। इसके अतिरिक्त, गुरु-शिष्य परंपरा, विदुर नीति, भीष्म के उपदेश और विभिन्न पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत जीवन-दर्शन, इसे एक जीवंत और शिक्षाप्रद ग्रंथ बनाते हैं। अंततः यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि महाभारत एक सार्वकालिक, सार्वभौमिक और बहुआयामी ज्ञानग्रंथ है, जो न केवल भारतीय संस्कृति की धरोहर है, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के लिए एक मार्गदर्शक प्रकाशस्तंभ के रूप में कार्य करता है।

मुख्य शब्द : *धर्म, कर्म, आत्मा, ज्ञान, नैतिकता, न्याय, नेतृत्व, समरसता, दर्शन*

1. प्रस्तावना

भारतीय सभ्यता का इतिहास केवल सांस्कृतिक विकास का इतिहास नहीं, बल्कि ज्ञान, दर्शन और वैज्ञानिक चेतना का भी इतिहास है। इस महान परंपरा में महाभारत एक ऐसा ग्रंथ है, जो मानव जीवन के समस्त आयामों को समाहित करता है। इसकी व्यापकता को स्वयं महाभारत में इस प्रकार व्यक्त किया गया है—

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्॥ *(आदि पर्व 2.31)*

इस श्लोक के माध्यम से स्पष्ट किया गया है कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—मानव जीवन के चारों पुरुषार्थ—महाभारत में समाहित हैं। यह कथन केवल ग्रंथ की महत्ता नहीं बताता, बल्कि यह भी दर्शाता है कि महाभारत भारतीय ज्ञान-विज्ञान का संपूर्ण प्रतिनिधित्व करता है। प्रस्तावना के संदर्भ में यह श्लोक इस बात को पुष्ट करता है कि महाभारत एक समग्र जीवन-दर्शन है। महाभारत केवल एक ऐतिहासिक कथा नहीं है, बल्कि यह जीवन के गहन नैतिक और दार्शनिक प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत करता है। इस संदर्भ में एक प्रसिद्ध श्लोक है— **यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्।** *(आदि पर्व)* यह श्लोक

महाभारत की सार्वभौमिकता और व्यापकता को दर्शाता है। इसका आशय है कि यह ग्रंथ मानव अनुभव और ज्ञान का ऐसा भंडार है, जिसमें जीवन के सभी पहलुओं का समावेश है। प्रस्तावना के रूप में यह श्लोक इस तथ्य को स्थापित करता है कि महाभारत केवल एक कथा नहीं, बल्कि एक विश्वकोशीय ग्रंथ है। महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित यह ग्रंथ ज्ञान की सर्वोच्चता को भी प्रतिपादित करता है। भगवद्गीता में कहा गया है— **न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।** *(भीष्म पर्व, गीता 4.38)* यह श्लोक दर्शाता है कि ज्ञान ही मानव जीवन का सर्वोच्च और पवित्र तत्व है। महाभारत का उद्देश्य केवल कथा कहना नहीं, बल्कि ज्ञान के माध्यम से जीवन को दिशा देना है। इसलिए प्रस्तावना में यह श्लोक महाभारत के ज्ञानात्मक स्वरूप को स्पष्ट करता है। महाभारत का एक महत्वपूर्ण पक्ष कर्म का सिद्धांत है, जो इसे व्यावहारिक जीवन से जोड़ता है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥ *(भीष्म पर्व, गीता 2.47)*

इस श्लोक के माध्यम से महाभारत यह सिखाता है कि मनुष्य को केवल अपने कर्म पर ध्यान देना चाहिए, फल की चिंता नहीं करनी चाहिए। प्रस्तावना के संदर्भ में यह श्लोक महाभारत को केवल दार्शनिक नहीं, बल्कि व्यवहारिक जीवन का मार्गदर्शक सिद्ध करता है। महाभारत का आध्यात्मिक आयाम भी उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना इसका सामाजिक और नैतिक पक्ष। आत्मा के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहा गया है—

न जायते म्रियते वा कदाचिन्
नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥ *(भीष्म पर्व, गीता 2.20)*

यह श्लोक दर्शाता है कि आत्मा अमर और अविनाशी है। यह विचार महाभारत को केवल भौतिक जीवन तक सीमित नहीं रखता, बल्कि इसे आध्यात्मिक ऊँचाइयों तक ले जाता है। प्रस्तावना में यह श्लोक इस बात को स्थापित करता है कि महाभारत जीवन और मृत्यु दोनों के रहस्यों का समाधान प्रस्तुत करता है। महाभारत का नैतिक पक्ष अत्यंत संतुलित और यथार्थवादी है। **अहिंसा परमो धर्मः धर्म हिंसा तथैव च।** *(अनुशासन पर्व)* यह श्लोक दर्शाता है कि अहिंसा सर्वोच्च धर्म है, परंतु जब धर्म की रक्षा का प्रश्न हो, तब हिंसा भी आवश्यक हो सकती है। प्रस्तावना के संदर्भ में यह श्लोक महाभारत की यथार्थवादी दृष्टि को उजागर करता है, जहाँ आदर्श और व्यवहार का संतुलन स्थापित किया गया है।अंततः महाभारत जीवन में समय और परिस्थितियों की भूमिका को भी स्पष्ट करता है— **कालो हि दुरतिक्रमः।** *(उद्योग पर्व)* यह श्लोक बताता है कि समय सबसे शक्तिशाली तत्व है और कोई भी उससे ऊपर नहीं जा सकता। प्रस्तावना में यह विचार महाभारत की गहराई और जीवन के यथार्थ को स्वीकार करने की प्रवृत्ति को दर्शाता है। इस प्रकार, इन सभी श्लोकों के माध्यम से स्पष्ट होता है कि महाभारत केवल एक महाकाव्य नहीं, बल्कि भारतीय ज्ञान-विज्ञान का सर्वस्व है। यह ग्रंथ मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष—धर्म, ज्ञान, कर्म, आत्मा और समय—का समन्वित और गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसलिए इसे भारतीय सभ्यता की बौद्धिक और आध्यात्मिक धरोहर के रूप में सर्वोच्च स्थान प्राप्त है।

2. महाभारत का स्वरूप और संरचना

भारतीय वाङ्मय परंपरा में महाभारत का स्वरूप अत्यंत विराट, बहुआयामी और सुव्यवस्थित है। यह केवल एक महाकाव्य नहीं, बल्कि इतिहास, दर्शन, नीति, धर्म और विज्ञान का समन्वित ग्रंथ है। इसकी संरचना 18 पर्वों में विभाजित है और इसमें लगभग एक लाख श्लोक निहित हैं, जो इसे विश्व का सबसे विस्तृत काव्य बनाते हैं। संस्कृत भाषा में रचित यह ग्रंथ 'इतिहास' की श्रेणी में आता है, जिसका अर्थ है—"यथा घटित", अर्थात् जो वास्तव में घटित हुआ। महर्षि वेदव्यास ने इस ग्रंथ को इस प्रकार रचा कि इसमें जीवन के सभी आयामों का क्रमबद्ध और तर्कसंगत प्रस्तुतीकरण हो सके। इसकी व्यापकता को दर्शाने वाला प्रसिद्ध श्लोक है— **यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्।** *(आदि पर्व)* यह श्लोक महाभारत के स्वरूप को परिभाषित करता है। इसका आशय यह है कि महाभारत केवल एक कथा नहीं, बल्कि ज्ञान का ऐसा महासागर है जिसमें समस्त मानवीय अनुभव समाहित हैं। इसकी संरचना इस प्रकार की गई है कि प्रत्येक पर्व जीवन के किसी विशिष्ट पक्ष को स्पष्ट करता है—आदि पर्व में उत्पत्ति और वंशावली, सभा पर्व में राज्यव्यवस्था, वन पर्व में तप और संघर्ष, भीष्म पर्व में धर्म

और युद्ध, शांति और अनुशासन पर्व में नीति और शासन के सिद्धांत आदि। इस प्रकार इसकी संरचना एक क्रमिक बौद्धिक यात्रा का रूप लेती है।

महाभारत के स्वरूप को समझने के लिए यह भी आवश्यक है कि इसे केवल कथा के रूप में न देखा जाए, बल्कि इसे ज्ञान-ग्रंथ के रूप में ग्रहण किया जाए। इसी संदर्भ में एक अन्य श्लोक इसकी संरचनात्मक विशेषता को स्पष्ट करता है— **इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।** *(महाभारत, आदि पर्व)* इस श्लोक का तात्पर्य है कि इतिहास और पुराणों के माध्यम से वेदों के ज्ञान का विस्तार किया जाना चाहिए। महाभारत इस सिद्धांत का सर्वोत्तम उदाहरण है, क्योंकि यह वेदों के गूढ़ ज्ञान को सरल और व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत करता है। अतः इसकी संरचना केवल घटनाओं का क्रम नहीं, बल्कि ज्ञान का व्यवस्थित विस्तार है। महाभारत की संरचना में संवाद शैली का विशेष महत्व है। इसमें गुरु-शिष्य, राजा-प्रजा, देव-मनुष्य के संवादों के माध्यम से ज्ञान प्रस्तुत किया गया है। इसका एक महत्वपूर्ण उदाहरण है— **न हि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।** *(भीष्म पर्व, भगवद्गीता 3.5)* यह श्लोक दर्शाता है कि कोई भी व्यक्ति क्षणभर भी बिना कर्म किए नहीं रह सकता। यह संवाद अर्जुन और श्रीकृष्ण के बीच होता है, जो महाभारत की संरचना में संवादात्मक शैली की महत्ता को दर्शाता है। इससे स्पष्ट होता है कि महाभारत केवल वर्णनात्मक ग्रंथ नहीं, बल्कि शिक्षात्मक संवादों का संग्रह है। महाभारत के स्वरूप का एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष इसकी बहुस्तरीयता (multi-layered structure) है। इसमें कथा के भीतर कथा (sub-narratives) की शैली अपनाई गई है। उदाहरण के लिए—नल-दमयंती कथा, सावित्री-सत्यवान कथा आदि। यह संरचना इसे और अधिक समृद्ध बनाती है। इस संदर्भ में एक श्लोक इसकी गहराई को इंगित करता है—

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्॥ *(अनुशासन पर्व)*

इस श्लोक में धर्म का सार प्रस्तुत किया गया है—जो अपने लिए प्रतिकूल हो, वह दूसरों के साथ न करें। यह सिद्धांत महाभारत की कथा-रचना में बार-बार विभिन्न प्रसंगों के माध्यम से प्रतिपादित होता है, जिससे इसकी संरचना शिक्षात्मक और व्यावहारिक दोनों बनती है। महाभारत का स्वरूप केवल लौकिक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक भी है। इसमें आत्मा, ब्रह्म, कर्म और मोक्ष के सिद्धांतों का गहन विश्लेषण मिलता है।

न जायते म्रियते वा कदाचिन्
नायं भूत्वा भविता वा न भूयः। *(भीष्म पर्व, गीता 2.20)*

यह श्लोक महाभारत के आध्यात्मिक स्वरूप को स्पष्ट करता है। इसकी संरचना में ऐसे अनेक दार्शनिक प्रसंग समाहित हैं, जो इसे केवल ऐतिहासिक ग्रंथ से ऊपर उठाकर दार्शनिक ग्रंथ बनाते हैं। महाभारत की संरचना में युद्ध का वर्णन केवल भौतिक संघर्ष के रूप में नहीं, बल्कि नैतिक और मानसिक संघर्ष के रूप में भी किया गया है। **अहिंसा परमो धर्मः धर्म हिंसा तथैव च।** *(अनुशासन पर्व)* यह श्लोक दर्शाता है कि महाभारत की संरचना में नैतिक द्वंद्व का गहन चित्रण है। यहाँ युद्ध केवल शक्ति का प्रदर्शन नहीं, बल्कि धर्म की स्थापना का माध्यम है। महाभारत के 18 पर्वों की संरचना भी अत्यंत प्रतीकात्मक है। 18 संख्या का संबंध युद्ध के 18 दिनों, 18 अक्षौहिणी सेना और 18 अध्यायों वाली गीता से है। यह संख्या संरचनात्मक संतुलन और पूर्णता का प्रतीक है। इस संदर्भ में एक श्लोक समय और नियति के महत्व को दर्शाता है— **कालो हि दुरतिक्रमः।** *(उद्योग पर्व)* यह श्लोक महाभारत की संरचना में समय की भूमिका को स्पष्ट करता है। संपूर्ण कथा समय और नियति के प्रवाह के अनुसार विकसित होती है, जिससे यह एक जीवंत और यथार्थपरक इतिहास बन जाती है। महाभारत की भाषा और शैली भी इसकी संरचना का महत्वपूर्ण भाग है। संस्कृत भाषा में रचित होने के कारण इसमें काव्यात्मकता, गद्यात्मकता और संवादात्मकता का अद्भुत समन्वय है। **न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।** *(गीता 4.38)* यह श्लोक दर्शाता है कि महाभारत का उद्देश्य केवल कथा कहना नहीं, बल्कि ज्ञान प्रदान करना है। इसकी भाषा सरल होते हुए भी गहन है, जो इसे जनसामान्य के लिए सुलभ बनाती है। महाभारत की संरचना में नैतिकता और व्यवहार का संतुलन भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। **धर्मो रक्षति रक्षितः।** *(शांति पर्व)* इस श्लोक का अर्थ है—जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है। यह सिद्धांत महाभारत की पूरी संरचना में व्याप्त है और प्रत्येक पर्व में किसी न किसी रूप में प्रकट होता है। अंततः, महाभारत का स्वरूप एक समग्र ज्ञान प्रणाली (holistic knowledge system) के रूप में सामने आता है। इसकी संरचना केवल घटनाओं का क्रम नहीं, बल्कि

जीवन के सिद्धांतों का वैज्ञानिक और दार्शनिक प्रस्तुतीकरण है। इस प्रकार, महाभारत की संरचना उसे एक साधारण ग्रंथ से असाधारण बनाती है। यह न केवल इतिहास है, बल्कि यह ज्ञान, दर्शन और जीवन का मार्गदर्शक है। इसकी प्रत्येक संरचनात्मक इकाई—चाहे वह पर्व हो, श्लोक हो या संवाद—मानव जीवन के किसी न किसी पहलू को स्पष्ट करती है। अतः यह कहा जा सकता है कि महाभारत का स्वरूप और संरचना भारतीय ज्ञान-विज्ञान की संपूर्णता का प्रतीक है, जो इसे विश्व के महानतम ग्रंथों में स्थान प्रदान करती है।

3. महाभारत: भारतीय ज्ञान-विज्ञान का भंडार

भारतीय ज्ञान-परंपरा में महाभारत केवल एक धार्मिक आख्यान नहीं, बल्कि बहुविषयी ज्ञान-विज्ञान का अद्वितीय भंडार है। इसमें राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, नैतिकता, सैन्यविज्ञान, शिक्षा तथा आध्यात्मिक दर्शन—सभी का संगठित और अनुभवसिद्ध निरूपण मिलता है। महर्षि वेदव्यास ने इसे इस प्रकार रचा है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मनुष्य को मार्गदर्शन प्राप्त हो। महाभारत की यह विशेषता उसे केवल धर्मग्रंथ नहीं, बल्कि एक समग्र ज्ञान-प्रणाली (holistic knowledge system) बनाती है। इस व्यापकता को समझने के लिए यह श्लोक अत्यंत महत्वपूर्ण है—

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्॥ *(अनुशासन पर्व)*

यह श्लोक महाभारत के नैतिक और सामाजिक विज्ञान की नींव को प्रस्तुत करता है। इसका अर्थ है कि जो व्यवहार स्वयं के लिए प्रतिकूल है, वह दूसरों के साथ नहीं करना चाहिए। यह सिद्धांत आधुनिक नैतिक दर्शन, मानवाधिकार और सामाजिक न्याय के मूलभूत आधार से मेल खाता है, जिससे स्पष्ट होता है कि महाभारत का ज्ञान केवल प्राचीन नहीं, बल्कि सार्वकालिक है। महाभारत का ज्ञान-विज्ञान जीवन के चारों पुरुषार्थों—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—को संतुलित करता है।

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्॥ *(आदि पर्व 2.31)*

यह श्लोक इस बात को पुष्ट करता है कि महाभारत में केवल आध्यात्मिक या धार्मिक ज्ञान ही नहीं, बल्कि भौतिक और सामाजिक जीवन से जुड़े सभी आयामों का समावेश है।

3.1 राजनीतिक विज्ञान और शासन व्यवस्था

महाभारत में राजनीतिक विज्ञान और शासन व्यवस्था का अत्यंत व्यवस्थित और व्यावहारिक स्वरूप मिलता है। विशेषतः शांति पर्व और अनुशासन पर्व में भीष्म पितामह द्वारा युधिष्ठिर को दिए गए उपदेश राज्य संचालन, प्रशासन और नीति के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। राजधर्म का मूल सिद्धांत इस श्लोक में व्यक्त किया गया है— **राजा धर्मेण पृथिवीं रक्षेत्।** *(शांति पर्व)* इसका अर्थ है कि राजा को धर्म के अनुसार पृथ्वी (राज्य) की रक्षा करनी चाहिए। यह सिद्धांत शासन के नैतिक आधार को स्पष्ट करता है—शक्ति नहीं, बल्कि धर्म ही शासन का वास्तविक आधार होना चाहिए। यह विचार आधुनिक लोकतांत्रिक शासन के कानून का शासन के सिद्धांत से अत्यंत निकटता रखता है। महाभारत में राजा के कर्तव्यों को और स्पष्ट करते हुए कहा गया है—

प्रजासुखे सुखं राज्ञः प्रजानां च हिते हितम्।
नात्मप्रियं हितं राज्ञः प्रजानां तु प्रियं हितम्॥ *(शांति पर्व)*

इस श्लोक का अर्थ है कि राजा का सुख प्रजा के सुख में निहित है और उसका हित प्रजा के हित में है। राजा को अपने व्यक्तिगत हित के बजाय प्रजा के हित को प्राथमिकता देनी चाहिए। यह सिद्धांत आधुनिक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा का मूल है। राजनीतिक नैतिकता और न्याय के संदर्भ में एक अन्य महत्वपूर्ण श्लोक है— **धर्मो रक्षति रक्षितः।** *(शांति पर्व)* इसका अर्थ है कि जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है। शासन व्यवस्था में यह सिद्धांत न्याय और नैतिकता

की अनिवार्यता को दर्शाता है। महाभारत में कूटनीति का भी विस्तृत वर्णन मिलता है। **साम दानं भेद दण्डाश्च राज्ञां नीतिर्न संशयः।** *(उद्योग पर्व)* इस श्लोक में चार प्रमुख कूटनीतिक उपायों—साम (समझाना), दान (प्रलोभन), भेद (विभाजन) और दण्ड (दंड)—का वर्णन किया गया है। यह सिद्धांत आधुनिक अंतरराष्ट्रीय संबंधों और कूटनीति में भी अत्यंत प्रासंगिक है। राजा के आचरण और चरित्र को शासन की सफलता का आधार बताया गया है— **यथा राजा तथा प्रजा।** *(शांति पर्व)* इसका अर्थ है कि जैसा राजा होगा, वैसी ही प्रजा होगी। यह सिद्धांत नेतृत्व के प्रभाव को दर्शाता है और आधुनिक प्रबंधन तथा प्रशासनिक सिद्धांतों में भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। महाभारत में न्याय व्यवस्था को भी अत्यंत महत्व दिया गया है— **न्यायेन मार्गेण नृपो व्यवस्येत्।** *(शांति पर्व)* अर्थात् राजा को न्याय के मार्ग पर चलकर शासन करना चाहिए। यह सिद्धांत विधि के शासन और न्यायपालिका की स्वतंत्रता के आधुनिक सिद्धांतों से मेल खाता है। महाभारत में शासन के दार्शनिक आधार को भी स्पष्ट किया गया है— **न हि धर्मादपेतस्य राज्यं सुखमवाप्नुयात्।** *(शांति पर्व)*इसका अर्थ है कि जो राज्य धर्म से विमुख होता है, वह कभी सुख प्राप्त नहीं कर सकता। यह विचार बताता है कि नैतिकता और न्याय के बिना कोई भी शासन स्थायी नहीं हो सकता।

3.2 नैतिकता और धर्मशास्त्र

भारतीय चिंतन परंपरा में महाभारत का मूल उद्देश्य केवल कथा-वर्णन नहीं, बल्कि धर्म की स्थापना और नैतिक जीवन का मार्गदर्शन करना है। इस ग्रंथ में धर्म को स्थिर नियम के रूप में नहीं, बल्कि परिस्थितियों के अनुसार विकसित होने वाली जीवंत संकल्पना के रूप में प्रस्तुत किया गया है। हाभारत का प्रत्येक प्रसंग—चाहे वह द्रौपदी का प्रश्न हो, भीष्म का उपदेश हो या अर्जुन का संशय—नैतिकता के किसी न किसी आयाम को उद्घाटित करता है। विशेष रूप से भगवद्गीता, जो महाभारत का ही एक भाग है, धर्म और नैतिकता का सर्वोच्च दार्शनिक प्रतिपादन करती है। नैतिकता के आधार के रूप में कर्मयोग का सिद्धांत अत्यंत महत्वपूर्ण है—

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥ *(भीष्म पर्व, गीता 2.47)*

यह श्लोक बताता है कि मनुष्य का अधिकार केवल कर्म करने पर है, फल पर नहीं। यह निष्काम कर्म का सिद्धांत है, जो नैतिक जीवन की नींव बनाता है। महाभारत के संदर्भ में यह श्लोक यह स्पष्ट करता है कि धर्म का पालन परिणाम की अपेक्षा से नहीं, बल्कि कर्तव्यबोध से किया जाना चाहिए। धर्म की गहराई और उसकी सूक्ष्मता को समझाने के लिए महाभारत में कहा गया है—

धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां
महाजनाः येन गताः स पन्थाः॥ *(वन पर्व)*

इस श्लोक का अर्थ है कि धर्म का वास्तविक स्वरूप अत्यंत सूक्ष्म और गूढ़ है, जिसे समझना सरल नहीं है; इसलिए महापुरुषों के आचरण को ही मार्गदर्शक मानना चाहिए। यह विचार दर्शाता है कि नैतिकता केवल सिद्धांत नहीं, बल्कि आचरण से प्रमाणित होती है।महाभारत में धर्म को सर्वोच्च शक्ति के रूप में स्थापित किया गया है— **धर्मो रक्षति रक्षितः।** *(शांति पर्व)* अर्थात् जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है। यह सिद्धांत नैतिकता के पारस्परिक स्वरूप को दर्शाता है—यदि मनुष्य धर्म का पालन करता है, तो धर्म भी उसकी रक्षा करता है। धर्म और सत्य के संबंध को स्पष्ट करते हुए कहा गया है— **न सत्यात् परमो धर्मः।***(शांति पर्व)* इस श्लोक का अर्थ है कि सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। यह महाभारत के नैतिक दर्शन का मूल आधार है, जहाँ सत्य को धर्म का सर्वोच्च स्वरूप माना गया है। महाभारत में आत्मसंयम और नैतिक अनुशासन को भी अत्यधिक महत्व दिया गया है—**दमो धर्मः परो लोके।** *(अनुशासन पर्व)* इसका अर्थ है कि आत्मसंयम ही इस संसार में सर्वोच्च धर्म है। यह श्लोक बताता है कि नैतिक जीवन केवल बाहरी आचरण से नहीं, बल्कि आंतरिक नियंत्रण और अनुशासन से भी जुड़ा हुआ है। नैतिकता के सामाजिक आयाम को स्पष्ट करते हुए एक अत्यंत महत्वपूर्ण श्लोक मिलता है— **आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।** *(अनुशासन पर्व)* इसका अर्थ है कि जो व्यवहार स्वयं के लिए प्रतिकूल है, वह दूसरों के साथ नहीं करना चाहिए। यह सिद्धांत सार्वभौमिक नैतिकता का आधार है और आधुनिक मानवाधिकार तथा सामाजिक न्याय की अवधारणाओं से गहराई से जुड़ा हुआ है। महाभारत में धर्म के संरक्षण के लिए कभी-कभी कठोर निर्णयों

की आवश्यकता को भी स्वीकार किया गया है— **अहिंसा परमो धर्मः धर्म हिंसा तथैव च।** *(अनुशासन पर्व)* यह श्लोक दर्शाता है कि अहिंसा सर्वोच्च धर्म है, परंतु जब धर्म की रक्षा का प्रश्न हो, तब हिंसा भी आवश्यक हो सकती है। यह महाभारत के नैतिक यथार्थवाद को दर्शाता है, जहाँ परिस्थितियों के अनुसार निर्णय लेने की आवश्यकता को स्वीकार किया गया है। नैतिकता के आध्यात्मिक आयाम को स्पष्ट करते हुए गीता में कहा गया है— **न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।** *(गीता 4.38)* यह श्लोक बताता है कि ज्ञान ही सबसे पवित्र है, और यही ज्ञान मनुष्य को नैतिक और धर्मपरायण बनाता है।

3.3 मनोविज्ञान और मानव व्यवहार

भारतीय ज्ञान-परंपरा में महाभारत मानव मनोविज्ञान का एक अत्यंत गहन और सूक्ष्म अध्ययन प्रस्तुत करता है। यह ग्रंथ केवल बाह्य घटनाओं का वर्णन नहीं करता, बल्कि पात्रों के अंतर्मन, उनके द्वंद्व, इच्छाएँ, भय, मोह, अहंकार और नैतिक संघर्षों का अत्यंत यथार्थ चित्रण करता है। महाभारत के पात्र—दुर्योधन, अर्जुन, युधिष्ठिर, भीष्म, कर्ण—सभी मानव मन के विभिन्न आयामों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस दृष्टि से महाभारत को मानव व्यवहार का एक जीवंत मनोवैज्ञानिक दस्तावेज कहा जा सकता है। मानव मन की अस्थिरता और चंचलता को स्पष्ट करते हुए भगवद्गीता में अर्जुन कहते हैं—

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्॥ *(भीष्म पर्व, गीता 6.34)*

इस श्लोक का अर्थ है कि मन अत्यंत चंचल, बलवान और दृढ़ है, जिसे नियंत्रित करना वायु को रोकने के समान कठिन है। यह श्लोक मानव मन की स्वाभाविक प्रवृत्ति को दर्शाता है और बताता है कि मानसिक संतुलन बनाए रखना कितना चुनौतीपूर्ण है। अर्जुन का संशय और मानसिक द्वंद्व भी महाभारत का एक महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक पक्ष है—

कर्पण्यदोषोपहतस्वभावः
पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे
शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥ *(गीता 2.7)*

इस श्लोक में अर्जुन अपनी मानसिक स्थिति को स्वीकार करते हुए कहते हैं कि उनका स्वभाव दुर्बलता से ग्रस्त हो गया है और वे धर्म के विषय में भ्रमित हैं। यह श्लोक मनुष्य के उस मनोवैज्ञानिक क्षण को दर्शाता है जब वह निर्णय लेने में असमर्थ हो जाता है और मार्गदर्शन की आवश्यकता महसूस करता है। मानव व्यवहार में अहंकार और आसक्ति के प्रभाव को महाभारत में अत्यंत स्पष्ट रूप से दिखाया गया है। दुर्योधन के चरित्र के माध्यम से यह प्रवृत्ति सामने आती है—

जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः
जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः। *(महाभारत, उद्योग पर्व)*

इस श्लोक का अर्थ है कि मैं धर्म को जानता हूँ, पर उसमें प्रवृत्ति नहीं होती; और अधर्म को जानता हूँ, पर उससे निवृत्ति नहीं होती। यह मानव मन की उस कमजोरी को दर्शाता है जहाँ व्यक्ति सही और गलत को जानते हुए भी अपने अहंकार और वासनाओं के कारण गलत मार्ग चुनता है। इच्छा, क्रोध और लोभ जैसे मानसिक विकारों का विश्लेषण करते हुए कहा गया है—

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम्॥ *(गीता 3.37)*

यह श्लोक बताता है कि कामना और क्रोध मनुष्य के सबसे बड़े शत्रु हैं। यह मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह मानव व्यवहार के नकारात्मक पक्षों की जड़ को स्पष्ट करता है। मानव मन के नियंत्रण और आत्मसंयम की आवश्यकता को भी महाभारत में विशेष महत्व दिया गया है—

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥ *(गीता 6.5)*

इस श्लोक का अर्थ है कि मनुष्य को स्वयं अपने द्वारा ही अपना उत्थान करना चाहिए और स्वयं को गिराना नहीं चाहिए, क्योंकि मन ही मनुष्य का मित्र भी है और शत्रु भी। यह श्लोक आत्मनियंत्रण और आत्मजागरूकता के महत्व को दर्शाता है, जो आधुनिक मनोविज्ञान के "self-regulation" सिद्धांत से मेल खाता है। युधिष्ठिर के चरित्र में धर्मनिष्ठा और मानसिक संतुलन का अद्भुत उदाहरण मिलता है। उनके व्यक्तित्व का आधार यह सिद्धांत है— **न सत्यात् परमो धर्मः।***(शांति पर्व)* इस श्लोक का अर्थ है कि सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। युधिष्ठिर का जीवन इस सिद्धांत का प्रतीक है, जो दर्शाता है कि नैतिकता और सत्यनिष्ठा मानव व्यवहार को संतुलित और स्थिर बनाती है।

मानव मन की शांति और संतुलन को प्राप्त करने के लिए समत्व का सिद्धांत भी अत्यंत महत्वपूर्ण है— **समत्वं योग उच्यते।** *(गीता 2.48)* इसका अर्थ है कि समभाव ही योग है। यह श्लोक मानसिक संतुलन और भावनात्मक नियंत्रण की आवश्यकता को दर्शाता है।

3.4 युद्ध विज्ञान और रणनीति

भारतीय ज्ञान-परंपरा में महाभारत युद्ध विज्ञान और रणनीति का अत्यंत विकसित, संगठित और सूक्ष्म स्वरूप प्रस्तुत करता है। यह ग्रंथ केवल युद्ध के वर्णन तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें युद्ध की योजना, सेना का संगठन, अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग, मानसिक प्रभाव, समय-निर्धारण तथा धर्माधारित युद्धनीति का गहन विवेचन मिलता है। महाभारत का युद्ध केवल बल का प्रदर्शन नहीं, बल्कि बुद्धि, संयम, नीति और धर्म के संतुलन का परिणाम है। महाभारत में युद्ध के आरंभ और उसकी व्यवस्था का अत्यंत सजीव चित्रण मिलता है—

ततः शंखाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः।
सहसैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽभवत्॥ *(भीष्म पर्व, गीता 1.13)*

इस श्लोक में युद्ध के प्रारंभ का वर्णन है, जहाँ शंख, भेरी और अन्य वाद्य यंत्रों के माध्यम से युद्ध की उद्घोषणा की जाती है। इससे स्पष्ट होता है कि युद्ध एक संगठित और अनुशासित प्रक्रिया थी, जिसमें संकेत और संचार की स्पष्ट व्यवस्था थी। यह दर्शाता है कि युद्ध केवल आक्रामकता नहीं, बल्कि सुव्यवस्थित संचालन का विषय था। महाभारत में सेना के संगठन का भी अत्यंत वैज्ञानिक स्वरूप मिलता है— **अक्षौहिण्यः समेता वै सेनयोर्भारतर्षभ।** *(भीष्म पर्व)* अक्षौहिणी सेना की व्यवस्था में रथ, घोड़े, हाथी और पैदल सैनिकों की निश्चित संख्या निर्धारित थी। यह व्यवस्था दर्शाती है कि उस समय सेना का संगठन पूर्णतः नियोजित और संतुलित था, जिसमें प्रत्येक अंग का अपना विशिष्ट स्थान और कार्य था। रणनीतिक दृष्टि से महाभारत में **चक्रव्यूह** का विशेष महत्व है— **व्यूहं चक्रं महाबाहो द्रोणेन विनिवेशितम्।** *(द्रोण पर्व)* यह श्लोक बताता है कि द्रोणाचार्य ने चक्रव्यूह की रचना की, जो एक गोलाकार और बहुस्तरीय व्यवस्था थी। इसमें प्रवेश करना अत्यंत कठिन और उससे बाहर निकलना उससे भी अधिक कठिन था। यह व्यवस्था युद्ध में सुरक्षा, नियंत्रण और रणनीतिक घेराबंदी का उत्कृष्ट उदाहरण है।

महाभारत में दिव्य अस्त्रों का भी विस्तृत वर्णन मिलता है, जो उस समय की उन्नत युद्ध-तकनीक को दर्शाते हैं— **दिव्यान्यस्त्राणि संहृत्य ब्रह्मास्त्रमुद्यतं तदा।** *(कर्ण पर्व)* यह श्लोक ब्रह्मास्त्र के प्रयोग का उल्लेख करता है, जो अत्यंत शक्तिशाली और विनाशकारी अस्त्र था। इसका प्रयोग अत्यंत सावधानी और विशेष परिस्थितियों में किया जाता था, जिससे यह स्पष्ट होता है कि शक्ति के साथ उत्तरदायित्व का भी ध्यान रखा जाता था। इसी प्रकार **नारायणास्त्र** का उल्लेख भी मिलता है— **नारायणास्त्रमुक्तं तत् सर्वसेन्यविनाशनम्।** *(द्रोण पर्व)* यह अस्त्र शत्रु के आचरण के अनुसार अपना प्रभाव बढ़ाता था। यदि सामने वाला शांत हो जाए, तो यह अस्त्र भी शांत हो जाता था। इससे यह सिद्ध होता है कि युद्ध में केवल बल ही नहीं, बल्कि व्यवहार और बुद्धि का भी विशेष महत्व था।

महाभारत में युद्ध के मानसिक पक्ष को भी अत्यंत महत्व दिया गया है— **भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः।** *(गीता 2.35)* इस श्लोक में बताया गया है कि यदि योद्धा भय के कारण युद्ध से पीछे हटे, तो उसे कायर समझा जाएगा। इससे स्पष्ट

होता है कि युद्ध में मनोबल, आत्मविश्वास और प्रतिष्ठा का अत्यंत महत्व है। युद्ध की नैतिकता भी महाभारत का एक महत्वपूर्ण अंग है— **न हन्याद्युध्यमानं च न चानायुधमाहितम्।** *(भीष्म पर्व)* इसका अर्थ है कि जो युद्ध नहीं कर रहा है या निहत्था है, उस पर आक्रमण नहीं करना चाहिए। यह सिद्धांत युद्ध में नैतिक मर्यादा और धर्म के पालन को दर्शाता है। समय और अवसर का महत्व भी महाभारत में स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया गया है— **कालो हि दुरतिक्रमः।** *(उद्योग पर्व)* यह श्लोक बताता है कि समय का उल्लंघन करना संभव नहीं है। युद्ध में सही समय पर सही निर्णय लेना ही विजय का आधार होता है।

3.5 सामाजिक व्यवस्था और न्याय प्रणाली

भारतीय ज्ञान-परंपरा में महाभारत सामाजिक व्यवस्था और न्याय प्रणाली का अत्यंत गहन, संतुलित तथा व्यावहारिक स्वरूप प्रस्तुत करता है। यह ग्रंथ केवल राजाओं और युद्धों की कथा नहीं है, बल्कि इसमें समाज के संगठन, प्रत्येक व्यक्ति के कर्तव्य, नैतिक मर्यादाएँ तथा न्याय के सिद्धांतों का विस्तृत निरूपण मिलता है। महाभारत में वर्ण व्यवस्था को जन्माधारित नहीं, बल्कि गुण, कर्म और आचरण पर आधारित बताया गया है, जिससे समाज में संतुलन और समन्वय बना रहता है। सामाजिक व्यवस्था के मूल सिद्धांत को स्पष्ट करते हुए कहा गया है— **चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।** *(भीष्म पर्व, गीता 4.13)* इस श्लोक का अर्थ है कि चार वर्णों की व्यवस्था गुण और कर्म के आधार पर की गई है। यह सिद्धांत दर्शाता है कि समाज का संगठन योग्यता और कार्य के अनुसार होना चाहिए, न कि केवल जन्म के आधार पर। इससे सामाजिक न्याय और समानता की भावना विकसित होती है।

महाभारत में प्रत्येक व्यक्ति के कर्तव्य को भी अत्यंत महत्व दिया गया है— **स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।** *(गीता 3.35)* इसका अर्थ है कि अपने कर्तव्य का पालन करते हुए मृत्यु भी श्रेष्ठ है, जबकि दूसरे के कर्तव्य का पालन भयावह है। यह श्लोक सामाजिक व्यवस्था में कर्तव्यनिष्ठा के महत्व को स्पष्ट करता है, जिससे समाज में संतुलन और अनुशासन बना रहता है। सामाजिक नैतिकता और न्याय के आधार को महाभारत में अत्यंत सरल शब्दों में व्यक्त किया गया है— **आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।** *(अनुशासन पर्व)* इस श्लोक का अर्थ है कि जो व्यवहार स्वयं के लिए प्रतिकूल है, वह दूसरों के साथ नहीं करना चाहिए। यह सिद्धांत सामाजिक न्याय और नैतिकता का मूल आधार है, जो समाज में समरसता और शांति स्थापित करता है।

महाभारत में न्याय प्रणाली का स्वरूप भी अत्यंत स्पष्ट और सशक्त रूप में प्रस्तुत किया गया है। **धर्मो रक्षति रक्षितः।** *(शांति पर्व)* इसका अर्थ है कि जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है। यह सिद्धांत न्याय प्रणाली का आधार है, जहाँ न्याय और धर्म को सर्वोपरि माना गया है। विदुर नीति में सामाजिक और राजनैतिक जीवन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण उपदेश दिए गए हैं, जो न्याय और नैतिकता की स्थापना में सहायक हैं।

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धाः।
न ते वृद्धा ये न वदन्ति धर्मम्॥ *(उद्योग पर्व)*

इस श्लोक का अर्थ है कि वह सभा नहीं है जहाँ विद्वान और अनुभवी लोग न हों, और वे वृद्ध नहीं हैं जो धर्म की बात न करें। यह न्याय प्रणाली में बुद्धिमत्ता, अनुभव और नैतिकता के महत्व को दर्शाता है। विदुर नीति में राजा और शासक के कर्तव्यों को भी स्पष्ट किया गया है— **राजा धर्मेण भूमिं रक्षेत्।** *(उद्योग पर्व)* इसका अर्थ है कि राजा को धर्म के अनुसार पृथ्वी की रक्षा करनी चाहिए। यह न्यायपूर्ण शासन का मूल सिद्धांत है, जिसमें शासक का दायित्व केवल शासन करना नहीं, बल्कि न्याय और सुरक्षा प्रदान करना भी है। सामाजिक व्यवस्था में सत्य और न्याय के महत्व को दर्शाते हुए कहा गया है— **न सत्यात् परमो धर्मः।** *(शांति पर्व)* इसका अर्थ है कि सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। यह सिद्धांत न्याय प्रणाली की नींव है, जहाँ सत्य को सर्वोच्च स्थान दिया गया है।

महाभारत में दण्ड व्यवस्था का भी उल्लेख मिलता है— **दण्डः शास्ति प्रजाः सर्वाः दण्ड एवाभिरक्षति।** *(शांति पर्व)* इस श्लोक का अर्थ है कि दण्ड ही प्रजा को अनुशासित करता है और वही उनकी रक्षा करता है। यह दर्शाता है कि समाज में व्यवस्था बनाए रखने के लिए उचित दण्ड व्यवस्था आवश्यक है, जिससे अन्याय और अपराध पर नियंत्रण रखा जा सके।

4. महाभारत में वैज्ञानिक दृष्टिकोण

भारतीय ज्ञान-परंपरा में महाभारत केवल धार्मिक या ऐतिहासिक ग्रंथ नहीं है, बल्कि इसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का भी गहन और व्यवस्थित स्वरूप निहित है। इस ग्रंथ में प्रकृति, समय, शरीर, स्वास्थ्य, ऊर्जा तथा अस्त्र-शस्त्रों के संदर्भ में अनेक ऐसी अवधारणाएँ मिलती हैं, जो उस समय के उन्नत ज्ञान को दर्शाती हैं। महाभारत का वैज्ञानिक दृष्टिकोण अनुभव, निरीक्षण और तर्क पर आधारित है, जो इसे केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक ज्ञान का भी स्रोत बनाता है।

4.1 खगोल विज्ञान (आकाशीय विज्ञान)

महाभारत में ग्रह-नक्षत्रों, ग्रहणों तथा समय-गणना का अत्यंत सूक्ष्म वर्णन मिलता है। युद्ध के समय आकाशीय घटनाओं को विशेष महत्व दिया गया है—

ग्रहा नक्षत्रताराश्च प्रदीप्ता इव सर्वशः।
उत्पाताश्च बहुविधा दृश्यन्ते भयरूपकाः॥ *(भीष्म पर्व)*

इस श्लोक में वर्णन है कि ग्रह और नक्षत्र असामान्य रूप से चमक रहे थे तथा अनेक प्रकार के अपशकुन दिखाई दे रहे थे। इससे स्पष्ट होता है कि उस समय खगोलीय घटनाओं का गहन निरीक्षण किया जाता था और उन्हें समय तथा घटनाओं से जोड़ा जाता था। इसी प्रकार ग्रहणों का भी उल्लेख मिलता है— **राहुणा ग्रस्यमानं च सूर्यं चन्द्रं च दृश्यते।** *(महाभारत)* यह श्लोक सूर्य और चन्द्र ग्रहण की प्रक्रिया को दर्शाता है, जहाँ राहु द्वारा ग्रसने का उल्लेख है। यह उस समय की खगोलीय समझ को प्रतीकात्मक रूप में व्यक्त करता है, जो आज के वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी मेल खाता है कि ग्रहण एक खगोलीय घटना है।

समय-गणना के महत्व को भी महाभारत में स्पष्ट किया गया है— **कालो हि दुरतिक्रमः।** *(उद्योग पर्व)* यह श्लोक बताता है कि समय का अतिक्रमण संभव नहीं है। इससे यह संकेत मिलता है कि समय को एक स्थिर और सार्वभौमिक तत्व के रूप में समझा गया था, जो खगोल विज्ञान का मूल आधार है।

4.2 चिकित्सा विज्ञान (आयुर्वेदिक दृष्टि)

महाभारत में चिकित्सा और स्वास्थ्य संबंधी ज्ञान के भी अनेक संकेत मिलते हैं। इसमें शरीर, रोग, उपचार और जीवनशैली के संबंध में व्यावहारिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है। स्वास्थ्य और संतुलन के महत्व को इस प्रकार व्यक्त किया गया है—

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥ *(गीता 6.17)*

इस श्लोक का अर्थ है कि जो व्यक्ति आहार, व्यवहार, कर्म और निद्रा में संतुलन रखता है, उसका जीवन दुःखों से मुक्त होता है। यह आयुर्वेद के उस सिद्धांत से मेल खाता है, जिसमें संतुलित जीवनशैली को स्वास्थ्य का आधार माना गया है।महाभारत में युद्ध के दौरान घायल योद्धाओं के उपचार का भी उल्लेख मिलता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि उस समय चिकित्सा पद्धतियाँ विकसित थीं। **भेषजैः शमिताः केचित् केचित् मन्त्रैः पुनः पुनः।** *(महाभारत)* इस श्लोक में औषधियों और उपचार विधियों का उल्लेख है, जो यह दर्शाता है कि चिकित्सा विज्ञान केवल जड़ी-बूटियों तक सीमित नहीं था, बल्कि उसमें विविध विधियों का प्रयोग किया जाता था।

4.3 अस्त्र-शस्त्र तकनीक (युद्ध विज्ञान का वैज्ञानिक पक्ष)

महाभारत में अस्त्र-शस्त्रों का वर्णन केवल पारंपरिक हथियारों तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें अत्यंत उन्नत और शक्तिशाली दिव्य अस्त्रों का भी उल्लेख मिलता है। ये अस्त्र विशेष मंत्रों और विधियों के माध्यम से संचालित होते थे, जिससे यह संकेत मिलता है कि उस समय ऊर्जा और शक्ति के नियंत्रित उपयोग का ज्ञान था। **दिव्यान्यस्त्राणि संहृत्य ब्रह्मास्त्रमुद्यतं तदा।**

(कर्ण पर्व) यह श्लोक ब्रह्मास्त्र के प्रयोग का वर्णन करता है, जो अत्यंत शक्तिशाली और विनाशकारी अस्त्र था। इसका उपयोग सीमित और नियंत्रित परिस्थितियों में किया जाता था, जिससे यह स्पष्ट होता है कि शक्ति के प्रयोग में नैतिकता और संयम का ध्यान रखा जाता था। इसी प्रकार नारायणास्त्र का उल्लेख मिलता है— **नारायणास्त्रमुक्तं तत् सर्वसेन्यविनाशनम्।** *(द्रोण पर्व)* यह अस्त्र शत्रु के आचरण के अनुसार अपना प्रभाव बदलता था, जिससे यह प्रतीत होता है कि उसमें प्रतिक्रिया के आधार पर कार्य करने की क्षमता थी। यह उस समय की उन्नत तकनीकी कल्पना और वैज्ञानिक दृष्टि को दर्शाता है।

5. महाभारत और दर्शनशास्त्र

भारतीय ज्ञान-परंपरा में महाभारत का स्थान केवल एक महाकाव्य के रूप में नहीं, बल्कि दर्शनशास्त्र के मूलाधार के रूप में अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह ग्रंथ मानव जीवन, जगत, आत्मा, कर्म, धर्म और मोक्ष जैसे गूढ़ विषयों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। महाभारत का दर्शन केवल सैद्धान्तिक नहीं है, बल्कि यह जीवन के व्यवहारिक पक्ष से गहराई से जुड़ा हुआ है। इसमें प्रस्तुत विचार मानव के आन्तरिक और बाह्य दोनों प्रकार के संघर्षों का समाधान प्रदान करते हैं। विशेषतः भगवद्गीता, जो महाभारत का एक महत्वपूर्ण अंश है, भारतीय दर्शन का सारभूत ग्रंथ माना जाता है। महाभारत का दर्शन जीवन को एक निरंतर गतिशील प्रक्रिया के रूप में देखता है, जिसमें कर्म, ज्ञान और भक्ति तीनों का समन्वय आवश्यक है। यह ग्रंथ मनुष्य को केवल भाग्य या नियति पर निर्भर रहने की शिक्षा नहीं देता, बल्कि उसे अपने कर्मों के माध्यम से अपने जीवन को दिशा देने के लिए प्रेरित करता है।

5.1 कर्म सिद्धांत

महाभारत में कर्म सिद्धांत का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। यह सिद्धांत बताता है कि मनुष्य का जीवन उसके कर्मों पर आधारित होता है और प्रत्येक कर्म का फल अवश्य प्राप्त होता है।

न हि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः॥ *(भीष्म पर्व, गीता 3.5)*

इस श्लोक का अर्थ है कि कोई भी व्यक्ति क्षणभर भी बिना कर्म किए नहीं रह सकता, क्योंकि प्रकृति के गुण उसे निरंतर कर्म करने के लिए प्रेरित करते हैं। यह सिद्धांत मानव जीवन की सक्रियता और गतिशीलता को दर्शाता है। कर्म के साथ-साथ उसके फल के प्रति आसक्ति का त्याग भी महाभारत का प्रमुख सिद्धांत है—

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥ *(गीता 2.47)*

यह श्लोक बताता है कि मनुष्य को अपने कर्म पर ध्यान देना चाहिए, न कि उसके फल पर। यह निष्काम कर्म का सिद्धांत है, जो जीवन को शुद्ध और संतुलित बनाता है। कर्म और ज्ञान के संबंध को भी महाभारत में स्पष्ट किया गया है— **न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।** *(गीता 4.38)* यह श्लोक दर्शाता है कि ज्ञान ही कर्म को दिशा देता है और उसे पवित्र बनाता है। कर्म के बंधन और उससे मुक्ति के विषय में कहा गया है— **यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।** *(गीता 3.9)* इसका अर्थ है कि यदि कर्म यज्ञ (उच्च उद्देश्य) के लिए नहीं किया जाता, तो वह बंधन का कारण बनता है। यह सिद्धांत बताता है कि कर्म का उद्देश्य केवल व्यक्तिगत लाभ नहीं, बल्कि व्यापक कल्याण होना चाहिए। कर्म के प्रभाव को दर्शाने वाला एक अन्य श्लोक है—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥ *(गीता 3.21)*

इसका अर्थ है कि श्रेष्ठ व्यक्ति जैसा आचरण करता है, सामान्य लोग भी वैसा ही करते हैं। यह सामाजिक कर्म सिद्धांत को स्पष्ट करता है।

5.2 आत्मा और ब्रह्म का संबंध

महाभारत में आत्मा और ब्रह्म के संबंध का अत्यंत गहन और दार्शनिक विवेचन मिलता है। यह विषय जीवन और मृत्यु के रहस्य को समझने का आधार है।

न जायते म्रियते वा कदाचिन्
नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥ *(गीता 2.20)*

इस श्लोक का अर्थ है कि आत्मा न जन्म लेती है और न ही मरती है। वह नित्य, शाश्वत और अविनाशी है। शरीर के नष्ट होने पर भी आत्मा नष्ट नहीं होती। यह सिद्धांत आत्मा की अमरता को स्पष्ट करता है। आत्मा के स्वरूप को और स्पष्ट करते हुए कहा गया है—

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही॥ *(गीता 2.22)*

इसका अर्थ है कि जैसे मनुष्य पुराने वस्त्र त्यागकर नए वस्त्र धारण करता है, वैसे ही आत्मा पुराने शरीर को त्यागकर नया शरीर धारण करती है। यह पुनर्जन्म की अवधारणा को स्पष्ट करता है। आत्मा की अविनाशिता को एक अन्य श्लोक में इस प्रकार व्यक्त किया गया है—

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥ *(गीता 2.23)*

यह श्लोक बताता है कि आत्मा को न शस्त्र काट सकते हैं, न अग्नि जला सकती है, न जल भिगो सकता है और न वायु सुखा सकती है। यह आत्मा की शाश्वतता और उसकी दिव्यता को दर्शाता है। आत्मा और परम तत्व (ब्रह्म) के संबंध को समझाने के लिए कहा गया है— **ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।** *(गीता 15.7)* इसका अर्थ है कि प्रत्येक जीवात्मा परमात्मा का ही अंश है। यह अद्वैत भाव को प्रकट करता है, जिसमें आत्मा और ब्रह्म के बीच एकता का भाव है। आत्मा की अनुभूति और ज्ञान को प्राप्त करने के लिए कहा गया है—

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥ *(गीता 6.5)*

इस श्लोक का अर्थ है कि मनुष्य को स्वयं अपने द्वारा ही अपना उत्थान करना चाहिए, क्योंकि आत्मा ही उसका मित्र भी है और शत्रु भी। यह आत्मानुशासन और आत्मज्ञान के महत्व को दर्शाता है।

6. महाभारत में शिक्षा और ज्ञान प्रणाली

भारतीय ज्ञान-परंपरा में महाभारत केवल इतिहास या आख्यान नहीं, बल्कि शिक्षा और ज्ञान की एक सुव्यवस्थित तथा जीवनोपयोगी प्रणाली का भी महान ग्रंथ है। इसमें शिक्षा को केवल पाठ्य ज्ञान तक सीमित नहीं रखा गया है, बल्कि इसे व्यक्तित्व निर्माण, आत्मसंयम, कर्तव्यबोध, नैतिकता और आध्यात्मिक उन्नति का साधन माना गया है। महाभारत में गुरु-शिष्य परंपरा का अत्यंत जीवंत और आदर्श चित्रण मिलता है, जिसमें ज्ञान का संचार केवल शब्दों के माध्यम से नहीं, बल्कि आचरण, अनुशासन और समर्पण के द्वारा होता है। महाभारत में शिक्षा का मूल उद्देश्य केवल विद्या प्राप्त करना नहीं, बल्कि जीवन के सत्य को जानना और उसे व्यवहार में उतारना है। इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण सिद्धांत प्रस्तुत किया गया है— **न हि ज्ञानेन**

सदृशं पवित्रमिह विद्यते। *(भीष्म पर्व, गीता 4.38)* इस श्लोक का अर्थ है कि इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र कुछ भी नहीं है। यह दर्शाता है कि शिक्षा का सर्वोच्च उद्देश्य आत्मज्ञान और सत्य की प्राप्ति है। गुरु-शिष्य परंपरा महाभारत की शिक्षा प्रणाली का आधार है। इसमें गुरु को ज्ञान का स्रोत और शिष्य को ज्ञान का पात्र माना गया है। गुरु के प्रति श्रद्धा और समर्पण को अत्यंत आवश्यक बताया गया है—

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः॥ *(गीता 4.34)*

इस श्लोक का अर्थ है कि ज्ञान को प्राप्त करने के लिए गुरु के पास विनम्रता, जिज्ञासा और सेवा भाव से जाना चाहिए। गुरु ही सत्य का मार्ग दिखाते हैं। यह शिक्षा प्रणाली में संवाद, प्रश्न और अनुभव के महत्व को दर्शाता है। महाभारत में द्रोणाचार्य और अर्जुन का संबंध शिक्षा प्रणाली का सर्वोत्तम उदाहरण है। द्रोणाचार्य ने अर्जुन को केवल अस्त्र-विद्या ही नहीं सिखाई, बल्कि उसे एकाग्रता, अनुशासन और समर्पण का भी पाठ पढ़ाया। अर्जुन की एकाग्रता का उदाहरण अत्यंत प्रसिद्ध है, जब उसने केवल लक्ष्य (पक्षी की आँख) को देखा। यह घटना यह सिद्ध करती है कि शिक्षा में ध्यान और एकाग्रता का कितना महत्व है। इस संदर्भ में एक श्लोक शिक्षा में आत्मसंयम के महत्व को स्पष्ट करता है— **दमो हि परमं बलम्।** *(अनुशासन पर्व)* इसका अर्थ है कि आत्मसंयम ही सबसे बड़ी शक्ति है। यह शिक्षा प्रणाली का मूल सिद्धांत है, क्योंकि बिना आत्मसंयम के ज्ञान का सही उपयोग संभव नहीं है। महाभारत में शिक्षा को जीवन के कर्तव्यों से भी जोड़ा गया है— **स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।** *(गीता 3.35)* इसका अर्थ है कि अपने कर्तव्य का पालन करना ही श्रेष्ठ है। शिक्षा का उद्देश्य भी व्यक्ति को उसके कर्तव्यों के प्रति जागरूक करना है, ताकि वह समाज में अपनी भूमिका को सही ढंग से निभा सके। महाभारत में ज्ञान के साथ-साथ विनम्रता और नैतिकता को भी अत्यंत महत्व दिया गया है—

विद्या ददाति विनयं विनयाद्याति पात्रताम्।
पात्रत्वात् धनमाप्नोति धनात् धर्मं ततः सुखम्॥ *(नीतिशास्त्रीय परंपरा में प्रसिद्ध)*

यह श्लोक दर्शाता है कि विद्या से विनम्रता आती है, विनम्रता से पात्रता, और पात्रता से धन तथा धर्म की प्राप्ति होती है। यह शिक्षा के समग्र प्रभाव को दर्शाता है। महाभारत में संवाद के माध्यम से शिक्षा देने की परंपरा भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। श्रीकृष्ण और अर्जुन के बीच संवाद के माध्यम से गीता का ज्ञान प्रस्तुत किया गया है, जो यह दर्शाता है कि शिक्षा केवल उपदेश नहीं, बल्कि संवाद और समझ का परिणाम है। **श्रद्धावान् लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः।** *(गीता 4.39)* इस श्लोक का अर्थ है कि श्रद्धा, समर्पण और इन्द्रिय संयम के माध्यम से ही ज्ञान की प्राप्ति होती है। यह शिक्षा प्रणाली में आंतरिक अनुशासन के महत्व को दर्शाता है।

महाभारत में शिक्षा को केवल बौद्धिक विकास तक सीमित नहीं रखा गया, बल्कि इसे नैतिक और आध्यात्मिक विकास से भी जोड़ा गया है। **उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।** *(गीता 6.5)* इसका अर्थ है कि मनुष्य को स्वयं अपने द्वारा ही अपना उत्थान करना चाहिए। यह शिक्षा के आत्मविकास के सिद्धांत को स्पष्ट करता है।महाभारत में शिक्षा का उद्देश्य समाज के कल्याण से भी जुड़ा हुआ है। विद्या का उपयोग केवल व्यक्तिगत लाभ के लिए नहीं, बल्कि समाज के उत्थान के लिए होना चाहिए।**यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।** *(गीता 3.21)* इस श्लोक का अर्थ है कि श्रेष्ठ व्यक्ति जैसा आचरण करता है, सामान्य लोग भी उसका अनुसरण करते हैं। यह शिक्षा के सामाजिक प्रभाव को दर्शाता है।

7. महाभारत का समकालीन महत्व

भारतीय ज्ञान-परंपरा में महाभारत केवल प्राचीन काल का ग्रंथ नहीं है, बल्कि यह वर्तमान युग में भी उतना ही प्रासंगिक और मार्गदर्शक है जितना अपने रचनाकाल में था। आज का समय तीव्र परिवर्तन, नैतिक द्वंद्व, सामाजिक असंतुलन और मानसिक तनाव से भरा हुआ है। ऐसे परिवेश में महाभारत का अध्ययन मानव को जीवन के जटिल प्रश्नों का समाधान प्रदान करता है। यह ग्रंथ केवल अतीत का दर्पण नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए भी दिशा-निर्देशक है। महाभारत का समकालीन महत्व इस तथ्य में निहित है कि इसमें वर्णित सिद्धांत समय, स्थान और परिस्थिति से परे हैं। इसमें प्रस्तुत नैतिकता, नेतृत्व, न्याय और सामाजिक समरसता के सिद्धांत आज भी उतने ही उपयोगी हैं जितने प्राचीन काल में थे।

7.1 नैतिक संकटों का समाधान

वर्तमान युग में मनुष्य अनेक नैतिक संकटों का सामना कर रहा है—सत्य और असत्य के बीच संघर्ष, कर्तव्य और स्वार्थ के बीच द्वंद्व, तथा व्यक्तिगत लाभ और सामाजिक हित के बीच संतुलन का प्रश्न। महाभारत इन सभी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करता है। धर्म की जटिलता को स्पष्ट करते हुए कहा गया है—

धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां
महाजनाः येन गताः स पन्थाः॥ *(वन पर्व)*

इस श्लोक का अर्थ है कि धर्म का वास्तविक स्वरूप अत्यंत सूक्ष्म और गूढ़ है, इसलिए महापुरुषों के मार्ग का अनुसरण करना ही उचित है। यह विचार आज के नैतिक संकटों में मार्गदर्शन प्रदान करता है, जहाँ स्पष्ट उत्तर न मिल पाने पर आदर्श व्यक्तियों के आचरण को अपनाया जा सकता है। नैतिकता के मूल सिद्धांत को महाभारत में अत्यंत सरल रूप में प्रस्तुत किया गया है— **आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।** *(अनुशासन पर्व)* इसका अर्थ है कि जो व्यवहार स्वयं के लिए प्रतिकूल है, वह दूसरों के साथ नहीं करना चाहिए। यह सिद्धांत आधुनिक समाज में नैतिक आचरण का आधार बन सकता है, जिससे सामाजिक संबंधों में संतुलन और सम्मान बना रहता है। सत्य और धर्म के संबंध को स्पष्ट करते हुए कहा गया है— **न सत्यात् परमो धर्मः।** *(शांति पर्व)* यह श्लोक बताता है कि सत्य ही सर्वोच्च धर्म है। आज के युग में, जहाँ असत्य और भ्रम का प्रसार बढ़ रहा है, यह सिद्धांत अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है।

7.2 नेतृत्व और प्रबंधन

महाभारत में नेतृत्व और प्रबंधन के उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं, जो आज के समय में भी अत्यंत प्रासंगिक हैं। इसमें यह स्पष्ट किया गया है कि एक सच्चा नेता वही है, जो अपने व्यक्तिगत हित से ऊपर उठकर समाज के कल्याण के लिए कार्य करे।

प्रजासुखे सुखं राज्ञः प्रजानां च हिते हितम्।
नात्मप्रियं हितं राज्ञः प्रजानां तु प्रियं हितम्॥ *(शांति पर्व)*

इस श्लोक का अर्थ है कि राजा का सुख प्रजा के सुख में निहित है और उसका हित प्रजा के हित में है। यह नेतृत्व का आदर्श सिद्धांत है, जो आज भी शासन, संगठन और समाज के संचालन में लागू होता है। नेतृत्व में आचरण का महत्व भी अत्यंत स्पष्ट रूप से बताया गया है—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥ *(गीता 3.21)*

इसका अर्थ है कि श्रेष्ठ व्यक्ति जैसा आचरण करता है, अन्य लोग भी उसका अनुसरण करते हैं। यह सिद्धांत बताता है कि नेता का आचरण ही उसके नेतृत्व की वास्तविक पहचान है। निर्णय क्षमता और कर्तव्यनिष्ठा को भी महाभारत में अत्यंत महत्व दिया गया है— **कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।** *(गीता 2.47)* यह श्लोक सिखाता है कि नेता को अपने कर्तव्य पर ध्यान देना चाहिए और परिणाम की चिंता से मुक्त होकर निर्णय लेना चाहिए। यह सिद्धांत आज के जटिल निर्णयों में भी अत्यंत उपयोगी है।

7.3 सामाजिक समरसता

महाभारत सामाजिक समरसता और संतुलन की स्थापना में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसमें समाज के प्रत्येक वर्ग के कर्तव्यों और अधिकारों का स्पष्ट वर्णन किया गया है, जिससे समाज में संतुलन और समन्वय बना रहता है। सामाजिक न्याय के सिद्धांत को इस प्रकार व्यक्त किया गया है— **धर्मो रक्षति रक्षितः।** *(शांति पर्व)* इसका अर्थ है कि जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है। यह सिद्धांत समाज में न्याय और संतुलन की स्थापना का आधार है। सामाजिक

संबंधों में समता और संतुलन को महत्त्व देते हुए कहा गया है— **समत्वं योग उच्यते।** *(गीता 2.48)* यह श्लोक बताता है कि समभाव ही जीवन का सर्वोत्तम मार्ग है। यह विचार सामाजिक समरसता के लिए अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि इससे भेदभाव और असमानता समाप्त होती है। समाज में अनुशासन और व्यवस्था बनाए रखने के लिए दण्ड का भी महत्व बताया गया है— **दण्डः शास्ति प्रजाः सर्वाः दण्ड एवाभिरक्षति।** *(शांति पर्व)* इसका अर्थ है कि दण्ड ही समाज को अनुशासित करता है और उसकी रक्षा करता है। यह सिद्धांत सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने के लिए आवश्यक है।

8. महाभारत: एक सार्वकालिक ग्रंथ

भारतीय ज्ञान-परंपरा में महाभारत केवल एक देश या काल-विशेष तक सीमित ग्रंथ नहीं है, बल्कि यह एक सार्वकालिक, सार्वभौमिक और सर्वमान्य ज्ञान-सम्पदा के रूप में स्थापित है। इसकी शिक्षाएँ समय, स्थान और परिस्थिति की सीमाओं को पार करते हुए समस्त मानवता के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होती हैं। महाभारत में वर्णित सिद्धांत—धर्म, सत्य, न्याय, कर्तव्य, आत्मसंयम और समरसता—ऐसे शाश्वत मूल्य हैं, जो किसी एक समाज या युग तक सीमित नहीं रहते, बल्कि हर युग में प्रासंगिक बने रहते हैं। महाभारत की इस सार्वभौमिकता को स्वयं ग्रंथ में इस प्रकार व्यक्त किया गया है— **यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्कचित्।** *(आदि पर्व)* यह श्लोक स्पष्ट करता है कि महाभारत में जीवन के सभी आयामों का समावेश है, इसलिए इसकी शिक्षाएँ हर युग और हर स्थान के लिए उपयुक्त हैं। यह केवल भारतीय समाज के लिए ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के लिए ज्ञान का स्रोत है। महाभारत की शिक्षाओं का आधार सत्य और धर्म है, जो किसी भी सभ्यता के स्थायी मूल तत्व हैं— **न सत्यात् परमो धर्मः।** *(शांति पर्व)* इस श्लोक का अर्थ है कि सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। यह सिद्धांत हर समाज में समान रूप से लागू होता है, चाहे वह किसी भी देश या संस्कृति का क्यों न हो।

महाभारत में मानवता के सार्वभौमिक नैतिक सिद्धांत को अत्यंत सरल रूप में प्रस्तुत किया गया है— **आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।***(अनुशासन पर्व)* इसका अर्थ है कि जो व्यवहार स्वयं के लिए प्रतिकूल है, वह दूसरों के साथ नहीं करना चाहिए। यह सिद्धांत समस्त मानव समाज के लिए एक समान रूप से स्वीकार्य नैतिक आधार है, जो सामाजिक समरसता और शांति की स्थापना करता है। महाभारत की शिक्षाएँ केवल नैतिकता तक सीमित नहीं हैं, बल्कि यह जीवन के संघर्षों का समाधान भी प्रस्तुत करती हैं। **कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।** *(भीष्म पर्व, गीता 2.47)* यह श्लोक सिखाता है कि मनुष्य को अपने कर्म पर ध्यान देना चाहिए और परिणाम की चिंता नहीं करनी चाहिए। यह सिद्धांत हर युग में लागू होता है और मानव जीवन को संतुलित और सफल बनाने में सहायक है। महाभारत का आध्यात्मिक दृष्टिकोण भी सार्वकालिक है—

न जायते म्रियते वा कदाचिन्
नायं भूत्वा भविता वा न भूयः। *(गीता 2.20)*

यह श्लोक आत्मा की अमरता को स्पष्ट करता है, जो जीवन और मृत्यु के रहस्य को समझने का सार्वभौमिक आधार है। महाभारत में समभाव और संतुलन को भी अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है— **समत्वं योग उच्यते।** *(गीता 2.48)* यह सिद्धांत जीवन के हर क्षेत्र में संतुलन बनाए रखने की प्रेरणा देता है, जो आधुनिक जीवन में अत्यंत आवश्यक है। समय और परिवर्तन की अनिवार्यता को भी महाभारत में स्पष्ट किया गया है— **कालो हि दुरतिक्रमः।** *(उद्योग पर्व)* यह श्लोक बताता है कि समय के प्रवाह को कोई नहीं रोक सकता। यह विचार हर युग में लागू होता है और मानव को परिवर्तन के साथ सामंजस्य स्थापित करने की प्रेरणा देता है।

निष्कर्ष

उपरोक्त समस्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि महाभारत केवल एक महाकाव्य या ऐतिहासिक ग्रंथ नहीं है, बल्कि यह भारतीय ज्ञान-विज्ञान, दर्शन और जीवन-दृष्टि का समग्र और सर्वांगीण प्रतिनिधित्व करता है। इसमें जीवन के प्रत्येक पक्ष—व्यक्तिगत, सामाजिक, नैतिक, आध्यात्मिक और बौद्धिक—का गहन और संतुलित विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। महाभारत का प्रमुख उद्देश्य धर्म की स्थापना और अधर्म का विनाश है, किंतु यहाँ धर्म को किसी कठोर नियम के रूप में नहीं, बल्कि परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होने वाली एक जीवंत संकल्पना के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यही कारण है कि यह ग्रंथ आज के युग में भी अत्यंत प्रासंगिक है, जहाँ मनुष्य अनेक नैतिक द्वंद्वों और निर्णयात्मक चुनौतियों का सामना कर रहा है।

कर्म सिद्धांत के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि मनुष्य अपने कर्मों का स्वयं निर्माता है और उसे अपने कर्तव्यों का पालन निष्काम भाव से करना चाहिए। आत्मा और ब्रह्म के संबंध का विवेचन जीवन और मृत्यु के रहस्य को समझने का मार्ग प्रशस्त करता है। इसी प्रकार, सामाजिक व्यवस्था, न्याय प्रणाली और नेतृत्व के सिद्धांत समाज को संतुलित और न्यायपूर्ण बनाने में सहायक सिद्ध होते हैं। महाभारत में शिक्षा प्रणाली, गुरु-शिष्य परंपरा और ज्ञान की महत्ता को जिस प्रकार प्रस्तुत किया गया है, वह आज की शिक्षा प्रणाली के लिए भी प्रेरणादायक है। इसके अतिरिक्त, इसमें निहित वैज्ञानिक दृष्टिकोण यह दर्शाता है कि प्राचीन भारतीय चिंतन केवल आध्यात्मिक ही नहीं, बल्कि तर्कसंगत और वैज्ञानिक भी था। समकालीन संदर्भ में महाभारत का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है, क्योंकि यह आधुनिक जीवन की जटिल समस्याओं—नैतिक संकट, नेतृत्व की चुनौतियाँ, सामाजिक असंतुलन और मानसिक तनाव—का समाधान प्रस्तुत करता है। इसके सिद्धांत मानव जीवन को संतुलन, समरसता और उद्देश्यपूर्ण दिशा प्रदान करते हैं। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि महाभारत एक सार्वकालिक और सार्वभौमिक ग्रंथ है, जिसकी शिक्षाएँ किसी एक काल या समाज तक सीमित नहीं हैं। यह मानवता के लिए एक ऐसा प्रकाशस्तंभ है, जो जीवन के हर क्षेत्र में मार्गदर्शन प्रदान करता है और मनुष्य को एक आदर्श, संतुलित और सार्थक जीवन जीने की प्रेरणा देता है।

संदर्भ सूची

1. वेदव्यास. *महाभारत*
2. गीता प्रेस. *श्रीमद्भगवद्गीता*
3. शर्मा, रामकृष्ण (2015). *भारतीय दर्शन का इतिहास*
4. मिश्रा, श्याम (2018). *महाभारत का समाजशास्त्रीय अध्ययन*
5. सिंह, अरुण (2012). *भारतीय संस्कृति और परंपरा*
6. त्रिपाठी, केदारनाथ (2016). *धर्म और नैतिकता*
7. चतुर्वेदी, प्रमोद (2014). *वेद और उपनिषद*
8. द्विवेदी, हजारीप्रसाद (2011). *भारतीय साहित्य की भूमिका*
9. पांडेय, नरेश (2017). *नैतिक दर्शन*
10. जोशी, विजय (2019). *भारतीय ज्ञान परंपरा*
11. शास्त्री, हरिदत्त (2013). *गीता का दार्शनिक विश्लेषण*
12. अवस्थी, विनोद (2015). *प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली*
13. तिवारी, राजेश (2016). *महाभारत और राजनीति*
14. वर्मा, सुषमा (2018). *भारतीय समाज और संस्कृति*
15. पाण्डेय, गोविंद (2014). *भारतीय इतिहास के स्रोत*
16. मिश्र, देवेंद्र (2017). *धर्मशास्त्र और समाज*
17. पाठक, अजय (2019). *भारतीय दर्शन के सिद्धांत*
18. शर्मा, राकेश (2020). *समकालीन संदर्भ में गीता*
19. शुक्ल, रामचंद्र (2012). *हिन्दी साहित्य का इतिहास*
20. द्विवेदी, सुरेश (2016). *प्राचीन भारतीय विज्ञान*
21. त्रिपाठी, अशोक (2017). *महाभारत का दार्शनिक अध्ययन*
22. सिंह, मनीष (2018). *भारतीय राजनीति का इतिहास*
23. तिवारी, सीमा (2019). *सामाजिक न्याय और धर्म*
24. जोशी, अर्चना (2020). *नैतिक मूल्य और समाज*
25. वर्मा, दीपक (2015). *भारतीय संस्कृति के आयाम*
26. शास्त्री, गोपाल (2016). *महाभारत का सांस्कृतिक अध्ययन*
27. अवस्थी, नीलम (2017). *भारतीय शिक्षा और परंपरा*
28. मिश्रा, राहुल (2018). *धर्म और दर्शन*
29. पाण्डेय, शैलेंद्र (2019). *भारतीय चिंतन परंपरा*
30. त्रिपाठी, सुनील (2020). *गीता और जीवन दर्शन*

31. सिंह, कविता (2021). *भारतीय समाजशास्त्र*
32. वर्मा, अनिल (2022). *भारतीय ज्ञान-विज्ञान*
33. तिवारी, मोहन (2023). *महाभारत का आधुनिक विश्लेषण*